भारतीय राष्ट्रवाद के विकास में उदारवादियों की भूमिका

राजनीतिक कार्य की विधियां

1905 तक भारत के राष्ट्रीय आंदोलन पर उन लोगों का वर्चस्व था जिनको प्रायः नरमपंथी राष्ट्रवादी कहा जाता है। कानून की सीमा में रहकर सांविधानिक आंदोलन और धीरे - धीरे, व्यवस्थित तरीके से राजनीतिक प्रगति - इन शब्दों में नरमपंथियों की राजनीतिक कार्यपद्धति को संक्षेप में रखा जा सकता है। उनका विश्वास था कि अगर जनमत को उभारा और संगठित किया जाए और प्रार्थनापत्रों, सभाओं, प्रस्तावों और भाषणों के द्वारा अधिकारियों तक जनता की मांगों को पहुंचाया जाए तो वे धीरे - धीरे एक - एक करके इन मांगों को पूरा करेंगे। इसलिए उनके राजनीतिक कार्य की दो दिशाएं थीं। पहला, भारत की जनता में राजनीतिक चेतना और राष्ट्रीय भावना जगाने के लिए एक प्रतिस्पर्धी जनमत तैयार करना, और जनता को राजनीतिक सवालों पर शिक्षित और एकताबद्ध करना। राष्ट्रीय काग्रेस के प्रस्ताव और प्रार्थनापत्र भी मूलतः इसी लक्ष्य द्वारा निर्देशित थे। हालांकि देखने में तो उनके स्मरणपत्र और प्रार्थनापत्र सरकार को संबोधित थे, लेकिन उनका असली उद्देश्य भारतीय जनता को शिक्षित करना था। उदाहरण के लिए जब 1891 में युवक गोखले ने पूना सार्वजनिक सभा द्वारा सावधानी के साथ तैयार करके भेजे गए एक स्मरणपत्र के बाद सरकार द्वारा दिए गए दो पंक्तियों के उत्तर पर अपनी निराशा व्यक्त की तो न्यायिस रानाडे ने इसकी व्याख्या इस प्रकार की :

" आप अपने देश के इतिहास में हमारे स्थान को नहीं समझते । ये स्मरणपत्र कहने को सरकार के नाम से संबोधित हैं। वास्तव में ये जनता को संबोधित है ताकि वह जान सके कि इन विषयों पर कैसे विचार करना चाहिए। यह काम किसी परिणाम की आशा किए बिना अभी अनके वर्षों तक चलाया जाना चाहिए, क्योंकि इस तरह की राजनीति इस देश के लिए बिल्कुल नई वस्तु है । "

दूसरे, आरंभिक राष्ट्रवादी ब्रिटिश सरकार और ब्रिटिश जनमत को प्रभावित करना चाहते थे ताकि जिस प्रकार के सुधार राष्ट्रवादी द्वारा सुझाए गए थे उन्हें लागू किया जाए। नरमपंथी राष्ट्रवादियों का विश्वास था कि ब्रिटिश जनता और संसद भारत के साथ न्याय तो करना चाहती थी, लेकिन उन्हें यहाँ की वास्तविक स्थिति की जानकारी नहीं थी। इसलिए भारतीय जनमत को शिक्षित करने के साथ - साथ नरमपंथी राष्ट्रवादी ब्रिटिश जनमत को शिक्षित करने के प्रयास

भी कर रहे थे। इस उद्देश्य से उन्होंने ब्रिटेन में जमकर प्रचार - कार्य किया। भारतीय पक्ष को सामने रखने के लिए प्रमुख भारतीयों के दल ब्रिटेन भेजे गए। 1889 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की एक ब्रिटिश समिति बनाई गई। इस समिति ने 1890 में इंडिया नामक एक पत्रिका भी निकालनी आरंभ की। दादाभाई नौरोजी ने अपने जीवन और आय का एक बड़ा हिस्सा इंग्लैंड में रहकर वहाँ की जनता में भारत की मांगों का प्रचार करने में लगा दिया।

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के अध्ययनकर्ता कभी - कभी भ्रम में पड़ जाते है, जब वे पाते हैं कि प्रमुख भारतीय नेता अग्रेजों के प्रति वफादारी की बड़ी - बड़ी कसमें खाते थे। इन कसमों का अर्थ हर्गिज यह नहीं है कि वे सच्चे देशभक्त नहीं थे या वे कायर लोग थे। उनका दिल से विश्वास था कि ब्रिटेन के साथ भारत का राजनीतिक संबंध बने रहना इतिहास के उस चरण में भारत के हित में था। इसलिए उनकी योजना अग्रेजों को भगाने की नहीं बल्कि ब्रिटिश शासन का रूपांतरण करके उसे राष्ट्रीय शासन के समान बनाने की थी। बाद में जब उन्होंने ब्रिटिश शासन की बुराइयों को और सुधार की राष्ट्रवादी मांगों को स्वीकार करने में सरकार की असफलता को समझा तो उनमें से कई ने ब्रिटिश शासन के प्रति वफादारी की कसम खाना बंद करके भारत के लिए स्वशासन की मांग उठानी शुरू कर दी। इसके अलावा उनमें से कई केवल इसलिए नरमपंथी थे क्योंकि वे समझते थे कि विदेशी शासकों को खुलकर चुनौती देने का समय अभी नहीं आया था।

जनता की भूमिका

संकुचित सामाजिक आधार प्रारंभिक राष्ट्रीय आंदोलन की बुनियादी कमजोरी थी। अभी जनता में इस आंदोलन की पैठ नहीं हुई थी। वास्तव में जनता में नेताओं की कोई राजनीतिक आस्था नहीं थी। सक्रिय राजनीतिक संघर्ष छेड़ने की समस्याओं का वर्णन करते हुए गोपालकृष्ण गोखले ने कहा कि "देश में विभाजन और उपविभाजन की एक अंतहीन श्रृंखला है, जनता का अधिकांश भाग अज्ञान से भरा हुआ और विचार और भावना के पुराने तरीकों से कसकर चिपक हुआ है, और यह जनता हर प्रकार के परिवर्तन की विरोधि है और परिवर्तन को समझती नहीं है। " इस प्रकार नरमपंथी नेताओं का विश्वास था कि औपनिवेशिक शासन के खिलाफ जुझारू जन - संघर्ष तभी छेड़ा जा सकता है जबकि भारतीय समाज के बहुविध तत्वों को एक राष्ट्र के सूत्र में बांधा जा चुका हो । लेकिन वास्तव में यह तो वह संघर्ष था जिनके दौरान भारतीय राष्ट्र का निर्माण

हो सकता था । जनता के प्रति इस गलत दृष्टिकोण का एक परिणाम हुआ कि राष्ट्रीय आंदोलन के आरंभिक चरण में जनता की एक निष्क्रिय भूमिका ही रही। इससे राजनीतिक नरमी का जन्म हुआ। जनता के समर्थन के अभाव में वे जुझारू राजनीतिक उपाय नहीं अपना सकते थे। हम आगे देखगें कि बाद के राष्ट्रवादी लोग नरमपंथियों से ठीक उसी अर्थ में भिन्न थे।

फिर भी प्रारंभिक राष्ट्रीय आंदोलन के संकुचित सामाजिक आधार से हमें यह निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए कि यह उन्हीं सामाजिक वगों के संकुचित हितों तक सीमित था जो इसमें शामिल थे। इसके कार्यक्रम और इसकी नीतियों भारतीय जनता के सभी वर्गों के हितों से जुड़ी थीं और औपनिवेशिक वर्चस्व के खिलाफ उदीयमान भारतीय राष्ट्रीयता का प्रतिनिधित्व करती थी।

सरकार का रवैया

शुरू से ही ब्रिटिश अधिकारी उभरते हुए राष्ट्रवादी आंदोलन के खिलाफ और राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रति शंकालु थे। वायसराय डफरिन ने हयूम को यह सुझाव दिया कि कांग्रेस राजनीतिक नहीं बल्कि सामाजिक मामलों को देखेगी, और इस तरह उसने राष्ट्रीय आंदोलन को दिशाभ्रष्ट करना चाहा। लेकिन कांग्रेस के नेताओं ने ऐसा परिवर्तन करने से इनकार कर दिया। लेकिन जल्दी ही यह स्पष्ट हो गया कि राष्ट्रीय कांग्रेस अधिकारियों के हाथों का खिलौना नहीं बन सकती और यह धीरे - धीरे भारतीय राष्ट्रवाद का केंद्रबिंदु बनती जा रही थी। अब ब्रिटिश अधिकारी खुलकर राष्ट्रीय कांग्रेस और दूसरे राष्ट्रवादी प्रवक्ताओं की आलोचना और निंदा करने लगे। डफरिन से लेकर नीचे तक के सभी ब्रिटिश अधिकारी राष्ट्रवादी नेताओं को "बेवफा बाबू", "राजद्रोही ब्राह्मण" और "हिंसक खलनायक" कहने लगे। कांग्रेस को "राजद्रोह का कारखाना" कहा जाने लगा। डफरिन ने 1887 में एक सार्वजनिक भाषण में राष्ट्रीय कांग्रेस पर हमला किया और उसे 'जनता' के एक बहुत ही सूक्ष्म हिस्से ' का प्रतिनिधि बताकर उसकी हंसी उड़ाई।

लार्ड कर्जन ने 1890 में विदेश सचिव को बतलाया कि "कांग्रेस का महल भरभरा रहा है और भारत में रहते हुए मेरी मुख्य महत्वकांक्षा यह है कि मैं शांति के साथ इसे मरने में सहयोग दें सकू।" भारतीय जनता की बढ़ती एकता उनके शासन कि लिए एक बड़ा खतरा है, यह महसूस करके अग्रेज अधिकारियों ने "बांटो और राज करो" की नीति को और बहुत जमकर लागू किया। उन्होंने सैय्यद अहमद खान, बनारस के राजा शिवप्रसाद और दूसरे ब्रिटिश समर्थक व्यक्तियों को

प्रोत्साहित किया कि वे काँग्रेस के खिलाफ आंदोलन चलाएं। उन्होने हिंदुओं और मुसलमानों में भी फूट डालने का काम किया। उन्होंने एक तरफ छोटी - छोटी छूटें देने दूसरी तरफ निर्मम दमन करने की नीति अपनाई। फिर भी अधिकारियों का यह विरोध राष्ट्रीय आंदोलन का विकास रोकने में असफल रहा।

आरभिक राष्ट्रीय आंदोलन का मूल्यांकन

कुछ आलोचकों का विचार है कि राष्ट्रवादी आदोलन और राष्ट्रीय कांग्रेस को प्रारंभिक चरण में अधिक सफलता नहीं मिली। जिन सुधारों के लिए राष्ट्रवादियों ने आंदोलन छेड़े उनमे से बहुत थोड़े सुधार ही सरकार ने लागू किए। इस आलोचना में बहुत कुछ सच्चाई है। लेकिन आरंभिक राष्ट्रीय आंदोलन को असफल घोषित करना भी आलोचकों के लिए सही नहीं है। ऐतिहासिक दृष्टि से देखें तो जो काम उन्होंने हाथ में लिए थे, उसकी तात्कालिक कठिनाइयों को देखते हुए इस आंदोलन का इतिहास बहुत उज्जवल है। यह अपने समय की सबसे प्रगतिशील शक्ति का सूचक था। यह एक व्यापक राष्ट्रीय जागृति लाने तथा जनता में एक ही भारतीय राष्ट्र के सदस्य होने की भावना जगाने में सफल रहा। इसने भारतीय को उनके साझे राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक नीतियों से जुड़े होने तथा साम्राज्यवाद के रूप में एक साझे शत्रु के अस्तित्व के प्रति जागरूक किया और इस प्रकार उन्हें एक राष्ट्र में एकताबद्ध किया। इसने जनता को राजनीतिक कार्य में प्रशिक्षित किया, उनमे जनतंत्र, राजनीतिक स्वतंत्रताओं, धर्मनिरपेक्षता और राष्ट्रवाद के विचारों को लोकप्रिय बनाया, उनमें आधुनिक दृष्टिकोण जगाया तथा ब्रिटिश शासन की बुराइयों को उनके सामने रखा। |

सबसे बड़ी बात यह है कि भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के सही चरित्र को निर्ममतापूर्वक उजागर करने में प्रारंभिक राष्ट्रवादियों ने अग्रगामी भूमिका निभाई। उन्होंने लगभग प्रत्येक महत्वपूर्ण आर्थिक प्रश्न को देश की राजनैतिक रूप से पराधीन स्थिति से जोड़ा। साम्राज्यवाद की उनकी शक्तिशाली अर्थशास्त्रीय अलोचना ब्रिटिश शासन के विरुद्ध बाद के सक्रिय जनसंघर्ष के दौरान राष्ट्रवादी आंदोलन का एक प्रमुख अस्त्र बन गई । अपने आर्थिक आंदोलनों के द्वारा ब्रिटिश शासन के निर्मम, शोषक चरित्र को बेनकाब करके उन्होंने उसके नैतिक आधारों को भी कमजोर किया। आरंभिक राष्ट्रीवादी आंदोलन ने एक साझा राजनीतिक - आर्थिक कार्यक्रम भी पेश किया जिसके आधार पर भारतीय जनता एकजुट होने के बाद राजनीतिक संघर्ष चला सकी।

इसने यह राजनीतिक सत्य सामने रखा कि भारत का शासन भारतीयों के हित में चलना चाहिए। इसने राष्ट्रवाद के प्रश्न को भारतीय जीवन का एक एक प्रमुख प्रश्न बना दिया। इसके अलावा, नरमपंथियों का राजनीतिक कार्य धर्म, भावुकता या खोखली भावना की दुहाई न देकर जनता के जीवन की ठोस वास्तविकता के ठोस अध्ययन और विश्लेषण पर आधारित था | आरंभिक आंदोलन की कमजोरियों को तो बाद की पीढ़ियों ने दूर कर दिया और उसकी उपलब्धियां आगे के वर्षों में एक और जोरदार राष्ट्रीय आंदोलन का आधार बन गई। इसलिए हम कह सकते हैं कि अपनी तमाम कमियों के बावजूद आरंभिक राष्ट्रवादियों ने वह बुनियाद बनाई जिस पर राष्ट्रीय आंदोलन आगे और भी विकसित हुआ। इसलिए उन्हें आधुनिक भारत के निर्माताओं में ऊंचा स्थान मिलना चाहिए।